तुम्हें सोने नहीं देगी

सरला माहेश्वरी

तुम्हें सोने नहीं देगी

(कविता संग्रह)

सरला माहेश्वरी

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: अप्रैल, 2022

© सरला माहेश्वरी

“सोबचेये सत्य कोबे पेयोछिनू जारे/ सोबचेये मिथ्या छिलो तारि माझे छद्मवेश धोरी/ अस्तित्वेर एई कलंक कभू/ सहितो ना विश्वेर विधान/ ए कथा निश्चित मोने जानी।/ सोबकिछू चोलियाछे निरंतर परिवर्तवेगे/ सेई तो कालेर धर्मो/ मृत्यु देखा देय एसे एकांतोई अपरिवर्तने/ ए विश्वे ताई से सत्य नहे/ ए कथा निश्चित मोने जानी।/ विश्वेरे जे जेनेछिलो आछे बोले/ सेई तार आमी/ अस्तित्वेर साक्षी सेई/ परम आमीर सत्ये सत्य तारा/ ए कथा निश्चित मोने जानी ।”

(कभी जिनमें सबसे बड़े सत्य को जाना था/ उसी के अंदर छद्मवेश में सबसे बड़ा झूठ था,/ अस्तित्व के इस कलंक को/ विश्व का विधान नहीं मानता/ यह बात मैं बिलकुल जानता हूं/ सब कुछ लगातार परिवर्तन के वेग से चल रहा है/ वही तो काल का धर्म है/ मृत्यु आती है बिल्कुल अपरिवर्तनीय बन/ इसीलिये इस विश्व में वह सत्य नहीं है/ यह बात मैं बिलकुल जानता हूं/ विश्व को जिसने जाना कि वह है/ उसका वही अहम/अस्तित्व के साक्षी उसी/ परम अहम के सत्य में उसका सत्य है/ यह बात मैं बिलकुल जानता हूं ।)

कविगुरू रवीन्द्रनाथ के 'शेष लेखा' के सत्य के इसी अवबोध को समर्पित

मेरे सत्य की ये कविताएँ

अनुक्रम

कुम्भकर्ण जागा हुआ है!	14
उनका सवाल	18
सनातन सत्य	20
शार्टकट वर्णमाला	23
हत्यारे समय में	25
शानदार, ज़बर्जस्त, ज़िन्दाबाद!	27
कल्पना देवी की दुआ	30
हट जाइये हमारे रास्ते से!	35
अब ख़बरदार! ये सब नहीं चलेगा!	40
सुनो! मैं कलबुर्गी बोल रहा हूँ	44
वो जो बुढ़िया माँ बिलख रही थी.. कहीं हिंदी,	47
अगर तुम बुरे न हुए होते	50
नया नाम	52

वे बहुत खुशहाल हैं 56

मुर्दाबाद! 60

आओ! मेरी जान! 63

निलय नील 65

धरती 67

करना चाहता हूँ तुमसे कुछ बातें 70

भाग यहाँ से! 76

मैं सरकार 79

तटस्थ आज़ादी 82

नेता की कार्यशाला 84

आत्ममुग्ध निरंकुश अहंकार 87

डरना मना है 90

संजय उवाच! 92

क्या तुम्हें भी लगने लगा है डर! 94

तुम्हारी तरह 99

साथी अरुण कुमार 103

आश्चर्य! ये मैं बोल रह हूँ! 105

तुम्हें सोने नहीं देगी ये आवाज 109

बर्बादी की कहानी 115

यह समय भक्तों का है 121

सत्य की कसौटी 124

जादूगर 126

एँगर रेप 127

करती नहीं विलाप! 132

दिव्यांग 139

नहीं मालूम से मालूम से होने की कहानी 141

क्या उन्होंने सोचा होगा। 153

सरल काकाजी 162

सांस्कृतिक हादसा 167

आहत भावना 170

इनकी शक्ल 173

रोहित वेमुला! झूठा है तुम्हारा क़बूलनामा! 177

रोहित वेमुला और स्टार्ट-अप्स! 182

क्यों होता है ऐसा! 188

वे नहीं कर सकते तुम्हें माफ! 190

स्मार्ट समय में कविता 196

स्मार्ट बनो! 200

हिटलर सिर्फ़ 'हिटलर' में नहीं होता! 202

आत्मकथन

कविता मेरे लिये अपने समय में प्रवेश के हजार दरवाजों में एक दरवाजा ही है। हर व्यक्ति अपने-अपने स्तर पर अपने वक्त पर काम करता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उससे समय का कुछ बनता या बिगड़ता भी है या नहीं। यह बनना-बिगड़ना तो एक संयोग है, नियति का संयोग नहीं अनेक प्रकार की चीजों का संयोग। और, जब संयोग है तो कहा जा सकता है कि वह एक चमत्कार भी है। कहते तो यह भी हैं कि जब कोई बदलाव बिलकुल प्रकट हो तो फिर वह बदलाव नहीं होता है। जिसे बदलाव का संयोग कहते हैं, उसमें सिर्फ चीजें नहीं बदलती जो दिखाई देता है, वही नहीं बदलता। बदल जाते हैं चीजों को देखने के मानदंड, जीवन का नजरिया। इसीलिये आज हम एक ऐसे तेजी से बदलते समय में जी रहे हैं, जब कुछ भी नहीं बदल रहा है। अर्थात लगातार और तेज परिवर्तन इसलिये कि वस्तुत: कुछ भी परिवर्तित न हो। चीजों को देखने के अपने पुराने मानदंडों से ही हम चिपके रहें।

एक ऐसे समय में कविता समय की ही एक उपज होने पर भी मेरे जैसे के लिये एक जरूरत के रूप में आती है और इसके साथ ही आते हैं कठिन परिश्रम दीर्घ साधना और निष्ठा के आग्रह जो इस कविता को जीवन के सभी क्षेत्रों में साकार करने के लिये जरूरी होते हैं। मेरे लिये कविता कभी भी अपने में इस तरह से सिमट जाना नहीं रहा है

कि जिसे अपने से बाहर की हर चीज को अस्वीकारने का 'विद्रोह' कहा जा सके।

यही वजह है कि कविता को अपनी दूसरी किसी भी सामाजिक सक्रियता से अलग करके देखना मेरे लिये संभव नहीं है। समय में प्रवेश का यह उपक्रम समय को बदलने के आगे के उपक्रमों से अभिन्न रूप में जुड़ा हुआ है। यह एक ऐसा काल है जब न सिर्फ कुछ न बदले इसीलिये बहुत कुछ बदल रहा है, बल्कि इस काल की एक प्रमुख प्रवृत्ति है कि अब तक जो भी किया- धरा गया है, उन सबको पीछे जाकर पोंछ डालो। अतीत के सारे महाख्यानों को साधारण प्रहसनों में बदल दिया जा रहा है, कुछ इस प्रकार कि जैसे कभी कुछ घटा ही न हो।

जिस समाज ने साम्प्रदायिकता के सबसे जहरीले दंश को सह कर यह जाना कि यह शुद्ध पाप है; जिस समाज ने अकूत बलिदानों से गुलामी की जंजीरों को तोड़ कर आजादी को जीवन के एक नैसर्गिक मूल्य के रूप में अपनाया - आज हमारी अर्जित इस नैसर्गिकता को ही सारहीन बना कर तमाम पापों को पुण्य में, मूल्यों को अधमता में तब्दील कर देने की कोशिशें हो रही हैं। राजनीति कला और साहित्य फिल्मों मेलों - सबमें रोजाना उन दृश्यों को देखा जा सकता है जहां आदमी को दी जाने वाली यातनाओं उसकी नृशंसतम हत्याओं और साजिशों का उत्सव मनाया जा रहा हैं। राजनेता खलनायकों के संवाद बोलते हैं साहित्यकार इंसानों की नहीं नीयत और प्रवृत्तियों की कहानियां कहते हैं, कलाकार अपनी प्रतिमा में जीवित उद्देश्यों की